बच्चे की भाषा और अध्यापक

कृष्ण कुमार

अध्यापक

एक निर्देशिका

हमारे स्कूलों में 'बात करना' प्रायः गलत समझा जाता है। यह माना जाता है कि यदि कोई बात कर रहा है तो ठीक से पढ़ाई नहीं कर रहा होगा। इसलिए जैसे ही अध्यापक बच्चों को बात करता हुआ देखता है, वह तुरंत उन्हें रोकता है। बात करने की छूट बच्चों को सिर्फ आधी छुट्टी में रहती है जब अध्यापक कोई महत्वपूर्ण काम नहीं कर रहा होता है।

बातचीत के प्रति उपेक्षा की वजह से हम शिक्षा में बातचीत के उपयोगों की अवहेलना करते आ रहे हैं। यह स्थिति सभी स्तरों पर है, पर प्रारम्भिक स्तर पर यह सबसे स्पष्ट है। नर्सरी व प्राइमरी स्कूल के बच्चों के लिए बातचीत करना, सीखने और सीखी हुई चीज़ को सुदृढ़ बनाने का एक बुनियादी माध्यम है। सच तो यह है कि ऐसे अध्यापक, जो बच्चों को बात नहीं करने देते, किताबों व अन्य सामग्री के लिए पैसे की कमी की शिकायत करने के हकदार नहीं हैं। वे पहले ही एक ऐसा मूल्यवान साधन बेकार जाने दे रहे हैं जिसके लिए कोई पैसा नहीं खर्च करना पड़ता। इसलिए ऐसा स्कूल जहां छोटे बच्चे बात करने को स्वतंत्र नहीं, बड़ा फिजूलखर्च स्कूल कहलाएगा।

यह सही है कि बच्चे तरह-तरह के उद्देश्य लेकर बातचीत करते हैं और ये सभी उद्देश्य अध्यापक के लिए उपयोगी नहीं कहे जा सकते। उदाहरण

के लिए बोरियत के मारे बात करने और दूसरे की निगाह से चूकी हुई चीज़ उसे दिखाने के लिए बात करने में फर्क है। दूसरी किस्म की बात बच्चे की सीखने की प्रक्रिया को बल देती है, जैसा कि दो बच्चों के इस संवाद में हो रहा है। ये बच्चे अध्यापिका की मेज़ के पास इंतज़ार में खड़े फुसफुसा रहे हैं और अध्यापिका रजिस्टर भरने में लगी है:

पहला बच्चा : देखा, आज बहनजी अंगूठी पहने हैं!

दूसरा बच्चा : तुमने पहले नहीं देखी?

पहला बच्चा : नहीं .... हां, हां, मैंने पहले देखी है।

दूसरा बच्चा : अरे लेकिन यह अंगूठी दूसरी है।

पहला बच्चा : बहनजी ने नई अंगूठी खरीदी है। यह पहले वाली से छोटी है।

दूसरा बच्चा : नहीं, पतली है।

यदि आप इस छोटे-से संवाद का विश्लेषण करें तो सीखने की उन सम्भावनाओं को पहचान सकेंगे जो बातचीत के ज़रिए ही इन दो बच्चों को उपलब्ध हुईं। यदि पहले बच्चे ने अध्यापिका की अंगूठी देख कर बात न छेड़ी होती तो उसे यह याद करने का मौका न मिलता कि बहनजी पहले भी अंगूठी पहनती थीं। यदि यह बातचीत न हुई होती तो दूसरे बच्चे को पुरानी और नयी अंगूठी में फर्क देखने का अवसर न मिलता, न ही यह समझने का अवसर मिलता कि 'छोटी' और 'पतली' में क्या भिन्नता है।

बातचीत के इन उपयोगों के प्रति सचेत होने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों की बात सुनने की आदत डालें। यह कहना आसान है, पर इसे करना मुश्किल है क्योंकि बड़े यह मानकर चलते हैं कि उनका काम बच्चों को निर्देश देना है और बच्चों का काम सुनना है। अच्छे श्रोता से मेरा आशय एक ऐसे व्यक्ति से है जो बात के सूक्ष्म उद्देश्य और बातचीत के कारण पैदा हुई सीखने की सम्भावनाओं को धैर्यपूर्वक पहचान सके।

किसी भी आम स्थिति में बातचीत में मस्त बच्चे ये दस क्रियाएं करते नज़र आ सकते हैं:

1. जिस चीज़ पर अभी तक ध्यान नहीं दिया, उस पर ध्यान देना,

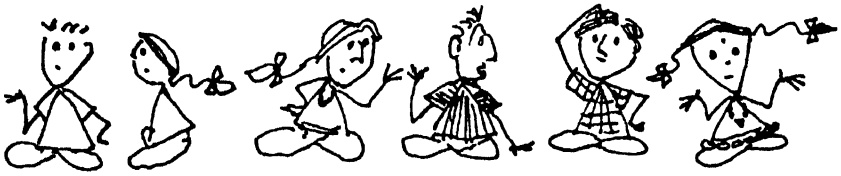

2. किसी भी चीज़ को मोटे तौर पर या बारीकी से देखना,
3. अपने-अपने निरीक्षणों का आदान-प्रदान करना,
4. निरीक्षणों को तरतीब से लगाना,
5. दूसरे के निरीक्षण को चुनौती देना,
6. निरीक्षण के आधार पर तर्क करना,
7. भविष्यवाणी करना,
8. पिछले किसी अनुभव को याद करना,
9. दूसरे की भावनाओं या उसके अनुभवों की कल्पना करना,
10. किसी काल्पनिक स्थिति में स्वयं की भावनाओं की कल्पना करना।

अगर आप बच्चों की बातचीत को ध्यानपूर्वक सुनने की आदत डाल लें तो आप जल्दी ही इन दस और कई अन्य सम्भावनाओं में फर्क करने में समर्थ हो जाएंगे।

अध्यापक को बच्चों में यह विश्वास पैदा करना होगा कि वे बात करने के लिए स्वतंत्र हैं।

हर बच्चा यह महसूस करे कि जब वह कुछ कहेगा तो उसे सुना जाएगा और सभी बच्चे यह महसूस करें कि अध्यापक को उनका बोलना अच्छा लगता है।

कक्षा में बच्चों को बातचीत के लिए प्रोत्साहित करने के अवसरों को हम पांच कोटियों में रख सकते हैं :

1. अपने बारे में बात करने के अवसर देना

सब बच्चे अपनी ज़िन्दगी के बारे में - उन घटनाओं के बारे में जो हो चुकी हैं और उनके बारे में भी जो अभी नहीं हुई हैं - बात करने को उत्सुक रहते हैं बशर्ते कि उन्हें इसके लिए प्रोत्साहन और मौका दिया जाए। कई अध्यापक बच्चों की व्यक्तिगत ज़िन्दगी और स्कूल में उनकी पढ़ाई के बीच कोई सम्बन्ध नहीं देख पाते। वे इस बात पर ज़ोर देते हैं कि कक्षा में सिर्फ पाठ्यपुस्तकों में दी गई सामग्री पर ही चर्चा हो। अध्यापक की इस मान्यता के कारण कई बच्चे कक्षा में किसी भी किस्म की हिस्सेदारी नहीं निभा पाते। अध्यापक जिन चीज़ों पर चर्चा करते हैं, वे बच्चों को आकर्षित नहीं कर पातीं, और बच्चों के व्यक्तिगत अनुभव (जैसे किसी रिश्तेदार का आना, आंधी और बारिश में घर की हालत, या बीमार पड़ना) अध्यापक को रास नहीं आते।

2. स्कूली अनुभवों पर बात करने के अवसर देना

स्कूल का परिवेश खोजबीन और निरीक्षण का एक शानदार माध्यम है। स्कूल कहीं भी हो, उसके इर्द-गिर्द ऐसी कई छोटी-छोटी चीज़ें होती हैं जिनसे विस्तृत जांच और बहस की सामग्री मिलती है। दुकानें, पेड़, पत्थर, मकान, सड़क, बाड़, मिट्टी, फाटक, घोंसले, छत्ते, फूल, तितलियां, खुली नाली, नल और तमाम चीज़ें स्कूल के पड़ोस में ढूंढी जा सकती हैं और बारीक अवलोकन, अवलोकनों के आदान-प्रदान, सच के निर्धारण और दूसरी चीज़ों से उसके सम्बन्ध की खोज के लिए काम में लाई जा सकती हैं।

3. तस्वीरों पर चर्चा करना

ऐसी बातचीत जो सर्जना और विश्लेषण को प्रोत्साहित करती हो, तस्वीरों के ज़रिए अच्छी तरह की जा सकती है। तस्वीरें कैसी भी हो सकती हैं - अखबारों और पत्रिकाओं के विज्ञापनों या खबरों के साथ छपे चित्र, कैलेंडरों, टिकटों, लेबलों और पोस्टरों पर छपे चित्र। ये सभी काम में लाए जा सकते हैं। इस प्रकार, तस्वीरों के स्रोत बहुत व्यापक हैं और किसी छोटे गांव में ढूंढे जा सकते हैं। अध्यापक साल-दर-साल इस्तेमाल के लिए तस्वीरों का एक संग्रह बना सकता है।

बच्चों के बीच बैठ कर बगैर किसी तैयारी के, बिल्कुल अनौपचारिक ढंग से किसी तस्वीर के बारे में बातचीत करना भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है। लेकिन यदि हम देखने के विभिन्न पहलुओं के बारे में सचेत हो जाएं तो बच्चों की भाषा के विकास की दृष्टि से हम ऐसी बातचीत को और भी अधिक उपयोगी बना सकते हैं। अध्यापक का हर प्रश्न बच्चों की प्रतिक्रिया को एक निश्चित ढंग से प्रभावित करता है। सवालों के ज़रिए बच्चों की निगाह और प्रक्रिया को विस्तार देने की क्षमता हम किस प्रकार हासिल कर सकते हैं? प्रक्रिया के स्तर, जिनकी तरफ बच्चों का ध्यान हम प्रश्नों की मदद से मोड़ सकते है, ये रहे:

अ. ढूंढना : इस स्तर पर हम बच्चों से केवल इतना कहेंगे कि वे चित्र में

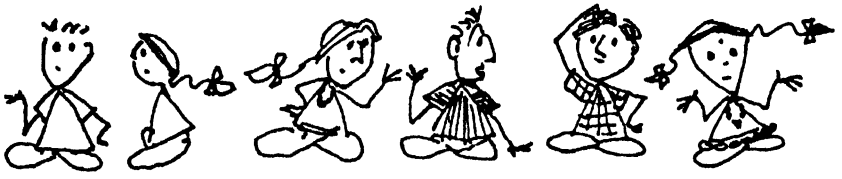

खोजियों की खबर

पांच या छह बच्चों की टोली को स्कूल की इमारत के आसपास या भीतर किसी निश्चित चीज़ या जगह का अध्ययन करने के लिए भेजिए। जैसे वे पेड़ों के एक झुंड, चाय की गुमटी, टूटे हुए पुल या घोंसले का मुआयना करने जा सकते हैं। उनसे कहिए कि वे सावधानी से उस चीज़ की खोजबीन करें और अपने निरीक्षणों की आपस में चर्चा करें।

जिस समय खोजी-दल बाहर गया हो, बाकी बच्चों को उस चीज़ के बारे में विस्तार से बताएं। जैसे यदि खोजी-दल चाय की गुमटी का अध्ययन करने गया है तो बच्चों को बताएं कि वहां क्या-क्या चीज़ें उपलब्ध हैं (बच्चों से भी पूछें), उसे कौन चलाता है, वहां उपलब्ध चीज़ें कहां-कहां से आती हैं आदि।

वापस आने पर खोजी-दल कक्षा के सवालों का सामना करे। प्रश्न पूछने में अध्यापक की बारी भी आनी चाहिए।

अगली बार किन्हीं और बच्चों का खोजी दल बनाइए।

दिखाई गई चीज़ों को ढूंढें। हम इस तरह के प्रश्न पूछ सकते हैं: 'इस चित्र में क्या है?' 'क्या इसमें एक चूहा है?'

ब. तर्क करना : प्रतिक्रिया के इस स्तर का सम्बन्ध कारण बताने की क्षमता से है। चित्र में दिखाई गई किसी बात का जो भी कारण बच्चा बताए, अध्यापक को उसे स्वीकार करना चाहिए। अध्यापक स्वयं भी कारण बता सकता है - पर केवल एक सम्भव उत्तर के तौर पर, अंतिम उत्तर के तौर पर नहीं। प्रश्नों के उदाहरण : 'नन्हीं लड़की क्यों रो रही है?' 'मोटर-साइकिल का पिछला हिस्सा हमें दिखाई क्यों दे रहा?' 'चूहा क्यों छिपा है?'

स. आरोपण : इस स्तर पर हम बच्चे से खुद को चित्र में आरोपित करने को कहते हैं। अत: इस स्तर पर प्रश्न पूछने का उद्देश्य बच्चे को एक कल्पित स्थिति में स्वयं को डालने, कौन क्या कहेगा यह कल्पना करने, और उन्हें कैसा लगेगा यह सोचने को प्रोत्साहित करना है। प्रश्नों के उदाहरण: 'यदि तुम इस पेड़

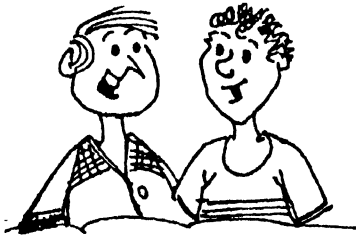

पर बैठे होते तो तुम्हें कसा-क्या दिखाई देता?' 'छोटी लड़की साइकिल पर बैठे आदमी से क्या कह रही है?' 'चूहा क्या सोच रहा है?'

द. भविष्यवाणी : इस स्तर का सम्बन्ध चित्र में दिखाई गई स्थिति के बाद की घटनाओं का अनुमान करने से है। बच्चों को यह सोचने के लिए प्रेरित करना है कि अब आगे क्या होगा। प्रश्नों के उदाहरण: 'यह आदमी अब कहां जाएगा?' 'नन्हीं लड़की घर पर क्या करेगी?' 'वह घर कैसे पहुंचेगी?'

ड. सम्बन्ध बैठाना : अब हम ऐसे प्रश्न पूछेंगे जो बच्चों को चित्र में दिखाई गई स्थिति से मिलती-जुलती कोई चीज़ अपनी ज़िन्दगी में ढूंढने को प्रेरित करें। प्रश्नों के उदाहरण: 'तुम कभी मोटर-साइकिल पर बैठे हो?' 'बैठकर कैसा लगता है?' 'क्या तुम क भी किसी अजनबी के साथ रहे हो?' 'उस दिन फिर क्या हुआ?'

4. कहानियां सुन चर्चा करना

कोई कहानी सुनते वक्त हमारा ध्यान उसमें चित्रित घटनाओं और चरित्रों की तरफ भागता है। कई कहानियों का सम्बन्ध हमारी देखी हुई घटनाओं से नहीं होता, पर हम उनकी कल्पना कर लेते हैं। इसी तरह भले ही हमने कहानी के चरित्रों जैसे लोग कभी न देखे हों, फिर भी हम उनकी तस्वीर मन में बना लेते हैं।

कहानी सुनते समय हम घटनाक्रम और चरित्रों के व्यवहार की कल्पना करते चलते हैं। दूसरी तरफ जब हम स्वयं कोई कहानी सुनाते हैं तो उसमें शामिल अनुभवों को व्यवस्थित करते चलते हैं। कहानी चाहे असली हो या काल्पनिक, उसमें दो चीज़ें अवश्य रहती हैं: पहला, जीवन की घटनाओं, चरित्रों आदि का पुनर्योजन, और दूसरा, सुनने वाले का ध्यानाकर्षण। ये दोनों बातें भाषा के कुशल इस्तेमाल पर निर्भर हैं। दरअसल हर एक कहानी हमसे भाषा की चतुरता की मांग करती है और कहानियां सुनने का अनुभव हमें भाषा के चतुर कौशल के नमूने देता है।

5. अभिनय करना

कहानी और नाटक में सम्बन्ध है, इसलिए अध्यापक आसानी से एक को दूसरे से जोड़ सकता है। कहानी को

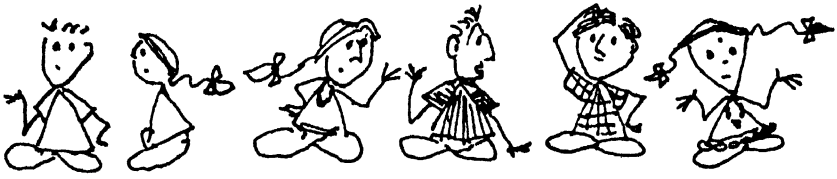

बूझो, मैंने क्या देखा

एक बच्चा बाहर जाए, दरवाज़े पर या कक्षा से कुछ दूर खड़े होकर आसपास दिखाई दे रही चीज़ों में से कोई एक चुन ले। वह चीज़ कुछ भी हो सकती है - पेड़, पत्ता, गिलहरी, चिड़िया, तार, खम्भा, पत्थर। लौटकर वह उस चीज़ के बारे में सिर्फ एक वाक्य बोले, जैसे, मैंने एक भूरी चीज़ देखी।

अब इस बच्चे से एक प्रश्न पूछकर उस चीज़ का अनुमान लगाने का मौका कक्षा के हर बच्चे को मिलेगा। उदाहरण के लिए--

पहला बच्चा -- 'क्या वह पतली है?'
उत्तर -- 'नहीं'।
दूसरा बच्चा -- 'वह कितनी बड़ी है?'
उत्तर -- 'वह काफी बड़ी है।'
तीसरा बच्चा -- 'क्या वह कुर्सी जितनी बड़ी है?'
उत्तर -- 'नहीं, वह कुर्सी से छोटी है।'
चौथा बच्चा -- 'क्या वह मुड़ सकती है?'

अंत में सही अनुमान लग चुकने के बाद कुछ बच्चों को अपने प्रश्नों के उत्तरों से आपत्ति हो सकती है। उदाहरण के लिए किसी को यह आपत्ति हो सकती है कि रंग भूरा नहीं, मिट्टी जैसा था। ऐसी स्थिति में बारीक अंतर देख पाने में अध्यापक को बच्चों की मदद करनी होगी।

..... सुन रहा बच्चा उसमें चित्रित भूमिकाओं को चुपचाप ग्रहण कर रहा होता है। यही चीज़ नाटक में होती है, पर अधिक मुखर रूप में। नाटक में बच्चों को विभिन्न भूमिकाओं को बातचीत, हाव-भाव और शरीर के ज़रिए प्रस्तुत करने के बहुत से मौके मिलते हैं।

नाटक बच्चों के लिए कोई विशेष या निराली चीज़ नहीं है - वह तो उनकी ज़िन्दगी का भाग है। नकल उतारना, किसी चीज़ को बढ़ा-चढ़ा कर बताना, स्वांग करना जैसी नाटकीय

युक्तियों का प्रयोग बच्चे करते ही रहते हैं। ऐसा बच्चा मुश्किल से मिलेगा जिसमें नाटकीय कौशल न हो। पर अनेक बच्चे अपने नाटकीय कौशल का कक्षा में प्रयोग करने को उत्सुक नहीं होते। ऐसा माहौल जिसमें नाटक सम्भव और सही लगे, कक्षा में अध्यापक की पहल से ही बन सकता है। पर माहौल बनाने की कोई एक तकनीक नहीं है। आप इसके लिए धीरे-धीरे प्रयास कर सकते हैं।

अध्यापक की प्रतिक्रिया

स्कूल में दाखिल होने तक बच्चे अपनी मातृभाषा की बुनियादी संरचनाओं पर अच्छा-खासा अधिकार पा चुके होते हैं। उन्हें न केवल तमाम तरह के कार्यों के लिए भाषा का प्रयोग करना होता है, बल्कि वे यह भी खूब समझ चुके होते हैं कि भिन्न-भिन्न सन्दर्भों और श्रोताओं के हिसाब से भाषा को समन्वित करना कितना ज़रूरी है। पांच वर्ष का बच्चा सन्देशों को कार्य में बदलना (जैसे, कहने पर पानी का गिलास लाना और उसे वापस सही जगह रखना) जानता है। वह लोगों की बातचीत की सहायता से उनके चरित्र और आपसी रिश्तों का अनुमान भी कर लेता है। छोटे बच्चे को ये क्षमताएं किसी के सिखाने से नहीं, रोज़ाना के जीवन से प्राप्त होती हैं। बच्चे के आसपास जो कुछ हो रहा होता है, वह उसे अपनी सोच-विचार की छलनी से छानकर अपने भाषा-संयंत्र का हिस्सा बना लेता है।

हमें ये क्षमताएं स्वयं हासिल करने का श्रेय बच्चे को देना चाहिए। हम बच्चे को कोई बिल्कुल नई चीज़ नहीं दे सकते। केवल ऐसी परिस्थितियां बना सकते हैं जिनमें बच्चा अपनी मौजूदा क्षमताओं का और विकास कर सके। बातचीत के सन्दर्भ में ऐसी परिस्थितियां रचने की मुख्य शर्त है बच्चे की बात पर अपनी प्रतिक्रिया के प्रति सचेत होना। हर बार बच्चे की बात सुनते समय हमें चाहिए कि :

1. उसे पूरी बात कहने दें,
2. वह जो कह रहा है उसमें रुचि लें,
3. मतभेद व्यक्त करने की इच्छा हो तो उस पर काबू करें,
4. बच्चे ने जो कहा है उस पर अपनी

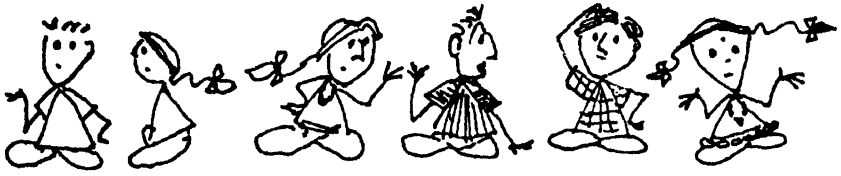

तुम कहां रहते हो?

बच्चे दो पंक्तियों में आमने-सामने बैठते हैं। एक पंक्ति 'बताने वालों' की है, दूसरी 'सुनने वालों' की। पहली पंक्ति में बैठे हर बच्चे को अपने सामने बैठे बच्चे को समझाना है कि वह अपने घर कैसे जाता है। रास्ते को अच्छी तरह समझने के लिए सुनने वाला कितने ही सवाल पूछ सकता है। उदाहरण :

बताने वाला: 'सीधे जाकर मुड़ जाओ।'
सुनने वाला: 'कितनी दूर तक सीधे जाना है?'
बताने वाला : 'कूड़े के ढेर तक। वहां से मुड़ना है।'
सुनने वाला : 'दाहिने मुड़ना है कि बाएं?'
बताने वाला : 'दाहिने....नहीं, नहीं बाएं।'

जब सभी बताने वालों की बारी आ चुके तब सुनने वाले बताने वाले बन जाएं। और खेल फिर शुरू।

प्रतिक्रिया विस्तार से यानी, अधिक शब्दों में और ज़्यादा समृद्ध वाक्य-रचना का इस्तेमाल करते हुए दें।

5. घटना की और जानकारी मांगें या बच्चे का ध्यान विषय के किसी नए पहलू की तरफ खींचें।

बच्चों से इस तरह बात करने के लिए काफी अभ्यास ज़रूरी है। सबसे ज़रूरी यह महसूस करना है कि बातचीत बच्चे के लिए सीखने का एक महत्वपूर्ण साधन है और उसका बच्चे के सामाजिक व्यवहार और व्यक्तित्व पर गहरा असर पड़ता है।

(कृष्ण कुमार - शिक्षाविद, दिल्ली विश्वविद्यालय में कार्यरत। उनकी लिखी किताबों में - राज समाज और शिक्षा - काफ़ी महत्वपूर्ण और चर्चित)

- बच्चे की भाषा और अध्यापक - एक निर्देशिका
- कृष्ण कुमार
वर्ष - 1986, पृष्ठ संख्या - 49
प्रकाशक -संयुक्त राष्ट्र बाल कोष,
73, लोदी स्टेट,
नई दिल्ली-110003